ईश्वर चंद्र विद्यासागर का महिला शिक्षा एवं महिला सुधार प्रयासों की वर्तमान में प्रासंगिकता : एक अध्ययन

"बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ"

एक सिनॉप्सिस

शिक्षा में डॉक्टरेट के पंजीकरण के लिए प्रस्तुत

शिक्षा विभाग में

ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय

पर्यवेक्षिका — **डॉ. चेतना**

प्रस्तुतकर्ता — **रेशमा पलसानिया**

शिक्षा विभाग

ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय

जयपुर राजस्थान

ईश्वर चन्द्र विद्यासागर का महिला शिक्षा एवं महिला सुधार प्रयासों की वर्तमान में प्रासंगिकताः एक अध्ययन

प्रस्तावना

शिक्षा एक प्रक्रम है जब भी हम वातावरण से सामंजस्य स्थापित करने का प्रयत्न करते हैं, शिक्षा प्रारम्भ हो जाती है। सृष्टि के प्रारम्भ में ज्यों ही इस धरा पर मनुष्य का आगमन हुआ होगा, त्यों ही उसे इस बात की आवश्यकता का अनुभव हुआ होगा कि वह अपने चारों ओर के वातावरण से सामंजस्य स्थापित करें। बस, उसी समय शिक्षा का प्रारम्भ हो गया होगा। जब मनुष्य इस संसार में आया होगा तो उसे भूख एवं प्यास को शान्त करने के लिए भोजन एवं जल की आवश्यकता प्रतीत हुई होगी। वह इन सबको खोजने में त्रुटि एवं प्रयास करता रहा होगा। वह अपनी बुद्धि का भी उपयोग करता रहा होगा।

एडम्स के अनुसार – ''शिक्षा एक ऐसी सुनियोजित प्रक्रिया है जिसमें एक व्यक्तित्व का विकास करने के लिए उस पर दूसरे व्यक्तित्व का मन, वाणी एवं कर्म के द्वारा प्रभाव पड़ता रहता हैं।''

जॉन डीवी के अनुसार – ''शिक्षा अनुभवों के सतत् पुनर्निर्माण के माध्यम से जीवन की प्रक्रिया है । यह व्यक्ति में उन समस्त क्षमताओं का विकास है जिसके द्वारा वह अपने पर्यावरण को नियंत्रित करता है तथा अपनी उपलब्धि की संभावनाओं को पूरी करना है।''

ब्राउन के अनुसार – ''शिक्षा चैतन्य रूप से एक नियन्त्रित प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन लाए जाते हैं और व्यक्ति के द्वारा समूह में।''

टॉम्सन के अनुसार – ''शिक्षा से मेरा तात्पर्य व्यक्ति के ऊपर वातावरण के उस प्रभाव से है जो उसके व्यवहार, विचार एवं अभिवृत्ति की आदतों में स्थायी परिवर्तन उत्पन्न कर देता है।''

मानव सभ्यता के क्रमिक विकास में शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान है। शिक्षा वह सम्बल है जिसके आधार पर व्यक्ति, समाज और राष्ट्र का सर्वांगीण विकास निर्भर करता है। यह मानव की आकांक्षाओं को जगाती है एवं पूरा करने में सहायता प्रदान करती है। यह मानव को उसके अतीत से परिचित कराती हैं, वर्तमान में जीवन जीने की कला सिखाती है एवं भविष्य का निर्माण करने की क्षमता प्रदान करती हैं।

बालक की क्रियाशीलता निरन्तर किसी उद्देश्य की प्राप्ति की ओर उन्मुख रहती है। शिक्षा को भी इसलिए 'सोद्देश्य प्रक्रिया' का रूप प्रदान किया गया है शिक्षा के उद्देश्य जीवन के उद्देश्यों पर आश्रित है। जीवन के उद्देश्यों में समता नहीं होती है परिणामस्वरूप शिक्षा के उद्देश्यों में भी विभिन्नता होती है। स्थान, समय एवं परिस्थिति तीनों मिलकर जीवन के जिन उद्देश्यों का निर्माण करती है उसी से शिक्षा के उद्देश्य भी निर्मित होते है। शिक्षा के माध्यम से मानव को जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति होती है। इसलिए जीवन की पूर्णता के लिए उसके लक्ष्यों का समन्वय शिक्षा के उद्देश्यों के साथ होना अनिवार्य है।

सभ्यता और संस्कृति का जनक मनुष्य है। पशु–पक्षियों के लिए इनका कोई अर्थ नहीं है। सभ्यता और संस्कृति का उन्नयन व्यक्ति के ऊपर निर्भर है। व्यक्ति अपने जीवन को सभ्यता एवं संस्कृति के पथ पर आगे बढ़ाने का प्रयत्न करता है। यह कार्य शिक्षा द्वारा ही सम्भव है। जीवन को उन्नत बनाने में शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान है।

महिला उत्थान

19वीं शताब्दी महिलाओं की शताब्दी के रुप में उभर कर सामने आई। यह वह दौर था जब सम्पूर्ण विश्व में महिलाओं की अच्छाई–बुराई, प्रकृति, क्षमताएँ एवं उर्वरा को लेकर गर्मागर्म बहसें चल रही थी। स्त्री की 'स्थिति' पुनः व्याख्यायित हुई। भारतीय मानस पर यूरोप के स्वतंत्रता, तार्किकता और मानवीयता के विचार के सहवर्त्त प्रभाव ने एक खुलापन प्रारम्भ किया एवं अन्य प्रश्नों के साथ ही स्त्री–प्रश्नों को विचार के केन्द्र में रखा गया। इन प्रश्नों पर अंग्रेज व भारतीय समाज सुधारकों दोनों ने विचार किया। जहाँ प्रारम्भ में तटस्थ अंग्रेजों के लिए ये प्रश्न स्त्रियों की दयनीय स्थिति में औपनिवेशिक राज्य के संरक्षण एवं दखल की आवश्यकता से जन्में थे, औपनिवेशिक विचारधारा के निर्णायक औजार बन गये थे, वहीं भारतीय बुद्विजीवियों ने दोहरे मूल्यबोधों के साथ इस विषय पर विचार किया। एक ओर प्राचीन युग में प्रासांगिक मूल्य खोजने की मुहिम चली तो दूसरी ओर पाश्चात्य प्रभाव के प्रकाश में आए नये विचारां ने उन्हें उद्वेलित किया। मूल्यों की टकराहट से अनिश्चय की स्थिति पैदा हुई।

भारतीय सुधारक पूर्व और पश्चिम के जीवन मूल्यों में से चुनाव एवं मध्यकालीन मूल्यों को तोड़ने के बीच डॉवाडोल थे। एक ओर पाश्चात्य दृष्टि अपनाना उन्हें गुलामी का प्रतीक लगा, वहीं भारतीय अतीत अंधविश्वासों से भरा। मध्यवर्गीय मानसिकता के चलते उन्होंने नवीनता का आग्रह अपने सार्वजनिक मूल्यों के लिए स्वीकारा और व्यक्तिगत निर्णयों में परम्परा का साथ दिया।

औपनिवेशिक ब्रिटिश सरकार अपने प्रारम्भिक वर्षां में भारतीय सामाजिक मामलों में अहस्तक्षेप की नीति अपनाती रही। मौजूदा व्यवस्थाओं को जारी रखने की माँग करने वाली व्यावहारिकता के साथ– साथ भारतीय संस्कृति के प्रति एक सम्मान का भाव उनके अंदर था। लेकिन इसके पूर्व प्रबोधनकाल के बाद ब्रिटेन के बौद्धिक वातावरण में अंग्रेजों ने अपने आप को पुरबवालों के मुकाबले आधुनिक एवं सभ्य जतलाना शुरु कर दिया और इस धारणा ने 19वीं सदी में उनकी साम्राज्यवादी दृष्टि को एक औचित्य प्रदान किया, जब भारत में तथाकथित सुधार का युग आरम्भ हुआ। पतित व्यवस्था का अंग्रेजी विचार भारत के अतीत की एक प्रयोजनवादी पुनर्रचना की उपज था। आरम्भिक काल में पश्चिम में भारत की छवि एक बीत चूकी गरिमा और साथ में उसके पतन की छवि थी। प्रजातिवादियों ने आनुवांशिक श्रेष्ठता की व्याख्या करते हुए अंग्रेजी शासन को प्रकृति प्रदत्त बतलाया। वंशवादियों का कहना था कि अंग्रेज आनुंवाशिक रुप से शासन करने के लिए उपयुक्त है, इसलिए वे निम्न जातियों को अपना शिकार बनाते है। यहीं से भारतीय सुधारकों ने अपना ध्यान वंश एवं जैविक परिभाषाओं के मुद्दे पर केन्द्रित किया, तथा उन्होंने यह साबित करने का प्रयत्न किया कि लघुता आनुवांशिक नहीं वरन् सामाजिक व्यवस्था का अंग है। यहीं सोचकर सुधारकों ने सती, बालविवाह तथा पर्दाप्रथा पर हमले किए। इसके साथ ही स्त्रियों की शिक्षा तथा विधवा पुनर्विवाह के आन्दोलन तेज कर दिए गये।

प्रथम चार्टर अधिनियम 1813 से पूर्व तक निश्चित रुप से ईस्ट इंडिया कम्पनी सामाजिक हस्तक्षेप के विरुद्ध रही। ब्रिटिश शासक एवं स्थानीय अधिकारी कतिपय कारणों से भारतीय समाज के दुर्गुणों के विरुद्ध कोई सकारात्मक कदम नहीं उठा पा रहे थे, इसका

प्रमुख कारण था कि भारतीय समाज एवं संस्कृति का दृढ़ धार्मिक आधार प्रशासकों को हतोत्साहित करते रहे और उन्हें सामाजिक कुरीतियों को यथावत रहने देने के लिए बाध्य करते रहे। प्रथाओं के विरुद्ध सरकारी आदेश निकाले जाएगे तो भारत में जनाक्रोश फैल जाएगा जिससे नवस्थापित ईस्ट इंडिया कम्पनी के लिए खतरा उत्पन्न हो सकता है। तत्पश्चात् ब्रिटिश नीति में परिवत्तर्न हुआ तथा भारतीय सामाजिक संस्थाओं में सावधानी के साथ हस्तक्षेप करने की कोशिशें धीरे–धीरे शुरु हुई। यह परिवत्तर्न मुख्यतः अनेक वैचारिक प्रभावों जैसे उपयोगितावाद, एंजिलवाद मुक्त व्यापार की सोच आदि के कारण हुआ था। जहाँ उपयोगितावादी, सामाजिक अभियांत्रिकी और कठोर सुधारवाद की बात करने लगे थे; वहीं एंजिलवादी भारतवासियों को उनके धर्मों से मुक्त कराने के लिए सरकार के हस्तक्षेप की आवश्यकता जतला रहे थे, जो अंधविश्वासों, मूत्तर्पूजा और पुरोहित वर्ग की निरंकुशता से भरे हुए थे। मुक्त व्यापार के समर्थक भी व्यापार का मुक्त– प्रवाह सुनिश्चित करने के लिए परम्परा की बेड़ियों से भारतीय अर्थव्यवस्था को मुक्त कराने की गरज से सरकार के हस्तक्षेप की माँग कर रहे थे। मगर कम्पनी की सरकार प्रतिकूल भारतीय प्रतिक्रिया के डर से हस्तक्षेप के बारे में अभी भी शंकाग्रस्त थी। वह तब तक ऐसा नहीं कर सकती थी जब तक भारतीय समाज का एक बड़ा भाग सुधारों के समर्थन में न खड़ा हो।

ईश्वर चन्द्र विद्यासागर : जीवन परिचय

विद्यासागर का जन्म 26 सितंबर, 1820 को मेदिनीपुर में एक निर्धन ब्राह्मण परिवार में हुआ था। वह स्वतंत्रता सेनानी भी थे। ईश्वरचंद्र को गरीबों और दलितों का संरक्षक माना जाता था। उन्होंने नारी शिक्षा और विधवा विवाह कानून के लिए आवाज उठाई और अपने

कार्यों के लिए समाज सुधारक के तौर पर पहचाने जाने लगे, लेकिन उनका कद इससे कई गुना बड़ा था। उन्हें बंगाल में पुनर्जागरण के स्तंभों में से एक माना जाता है। उनके बचपन का नाम ईश्वर चंद्र बंद्योपाध्याय था। संस्कृत भाषा और दर्शन में अगाध ज्ञान होने के कारण विद्यार्थी जीवन में ही संस्कृत कॉलेज ने उन्हें विद्यासागर की उपाधि प्रदान की थी। इसके बाद से उनका नाम ईश्वर चंद्र विद्यासागर हो गया था।

महान शिक्षाविद, संस्कृत विद्वान और प्रसिद्ध सामाजिक सुधारक ईश्वर चंद्र विद्यासागर ने समाज में व्याप्त रुढ़ियों को चुनौती देते हुए सामाजिक सुधार की जो अलख जगायी, उससे देश में सामाजिक स्तर पर क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ. विधवा पुनर्विवाह अधिनियम और महिलाओं की शिक्षा प्रसार में विद्यासागर की भूमिका अकथनीय है।

उन्होंने बाल विवाह जैसे क्रूरतम कृत्यों को रोकने के लिए अभियान चलाया. महान शिक्षाविद् विद्यासागर का बंगाली भाषा के विकास में बहुत बड़ा योगदान है। बंगाली भाषा की लिपि और वर्णक्रम के विकास में ईश्वरचंद्र ने अमूल्य योगदान दिया है. विद्यासागर भारत के इतिहास में ऐसे महापुरुष के रूप में दर्ज हैं, जिनकी सोच और कार्य करने के तरीके समय से बहुत आगे थे।

ईश्वर चन्द्र विद्यासागर के महिला उत्थान में किए गए कार्य

विद्यासागर को संस्कृत महाविद्यालय में प्रचलित मध्यकालीन विद्वतापूर्ण व्यवस्था को फिर से तैयार करने और शिक्षा व्यवस्था में आधुनिक अंतर्दृष्टि लाने का श्रेय दिया जाता है। विद्यासागर ने प्रोफेसर के रूप में संस्कृत महाविद्यालय में वापस आने के बाद जो पहला

परिवर्तन किया, वह संस्कृत के अलावा अंग्रेजी और बंगाली को भी सीखने के माध्यम के रूप में शामिल करना था। उन्होंने वैदिक शास्त्रों के साथ–साथ यूरोपीय इतिहास, दर्शन और विज्ञान के पाठ्यक्रम पेश किए। उन्होंने छात्रों को इन विषयों को आगे बढ़ाने और दोनों दुनिया से सर्वश्रेष्ठ लेने के लिए प्रोत्साहित किया। उन्होंने गैर–ब्राह्मण छात्रों को प्रतिष्ठित संस्थान में दाखिला लेने की अनुमति देते हुए संस्कृत कॉलेज में छात्रों के लिए प्रवेश के नियमों में बदलाव किया। उन्होंने दो पुस्तकें "उपकारामोनिका" और "बयाकरन कौमुदी' लिखीं, जो आसान सुगम्य बंगाली भाषा में संस्कृत व्याकरण की जटिल धारणाओं की व्याख्या करती हैं। उन्होंने कलकत्ता में पहली बार प्रवेश शुल्क और ट्यूशन शुल्क की शुरुआत की ।

वे नारी शिक्षा के प्रबल पक्षधर थे। उन्होंने शिक्षा को उन सभी सामाजिक उत्पीड़न से मुक्ति पाने के लिए प्राथमिक मार्ग के रूप में देखा । उन्होंने अपनी पद का इस्तेमाल किया और लड़कियों के लिए स्कूल खोलने के लिए कड़ी मेहनत की और यहां तक कि उपयुक्त पाठ्यक्रम की रूपरेखा तैयार की, जिसने न केवल उन्हें शिक्षित किया, बल्कि उन्हें सुईवर्क जैसे व्यवसाय के माध्यम से आत्मनिर्भर बनाने में सक्षम बनाया। उन्होंने घर–घर जाकर परिवारों के प्रमुखों से अनुरोध किया कि वे अपनी बेटियों को स्कूलों में दाखिला लेने दें। उन्होंने पूरे बंगाल में महिलाओं के लिए 35 स्कूल खोले और 1300 छात्रों के नामांकन में सफल रहे। यहां तक कि उन्होंने नारी शिक्षा भंडार की शुरुआत की, जो नारी शिक्षा के लिए सहायता देने के लिए एक कोष था। उन्होंने 7 मई, 1849 को बेथ्यून स्कूल, भारत में पहले स्थायी कन्या विद्यालय की स्थापना की। जिसके लिए जॉन इलियट ड्रिंकवाटर बेथ्यून को अपना समर्थन दिया था ।

उन्होंने अपने आदर्शों को नियमित लेखों के माध्यम से प्रसारित किया जो उन्होंने पत्रिकाओं और समाचार पत्रों के लिए लिखे थे। वह 'तत्त्वबोधिनी पत्रिका', 'सोमप्रकाश', 'सर्बशुभंकरी पत्रिका' और 'हिंदू पैट्रियट' जैसे प्रतिष्ठित पत्रकार प्रकाशनों से जुड़े थे। उन्होंने कई किताबें लिखीं जो बंगाली संस्कृति में प्राथमिक महत्व रखती हैं। उनकी स्थायी विरासत बंगाली वर्णमाला सीखने के लिए प्राथमिक स्तर की पुस्तक "बोर्नो पोरिचोय 'के साथ बनी हुई है, जहां उन्होंने बंगाली वर्णमाला का पुनर्निर्माण किया और इसे 12 स्वर और 40 व्यंजन की टाइपोग्राफी में सुधार किया। उन्होंने सस्ती कीमतों पर मुद्रित पुस्तकों का उत्पादन करने के उद्देश्य से संस्कृत प्रेस की स्थापना की, ताकि आम लोग उन्हें खरीद सकें।

विद्यासागर उस ज़ुल्म के बारे में हमेशा आवाज़ उठाई, जो उस समय महिलाओं पर अत्याचार करता था। वह अपनी माँ के बहुत करीब थे, जिसने उन्हें एक बार हिंदू विधवाओं के दर्द और असहायता को कम करने के लिए के लिए निर्देशित किया था, जो कि अपमानजनक जीवन जीने के लिए मजबूर थीं। उन्हें जीवन के बुनियादी सुखों से वंचित कर दिया गया, समाज में हाशिए पर रखा गया, अक्सर गलत तरीके से उनका शोषण किया जाता था और उनके परिवार द्वारा उन्हें बोझ माना जाता था। विद्यासागर का दयालु हृदय उनकी दुर्दशा नहीं देख सका और उन्होंने इन असहाय महिलाओं के लिए जीवन की गुणवत्ता में सुधार करने के लिए इसे अपना लक्ष्य बना लिया। उन्हें रूढ़िवादी समाज के उग्र विरोध का सामना करना पड़ा जिसने इस अवधारणा को कुछ विधर्मी करार दिया। उन्होंने ब्राह्मणवादी सोच को चुनौती दी और साबित किया कि वैदिक शास्त्रों द्वारा विधवा पुनर्विवाह को मंजूरी दी जाती है। उन्होंने

ब्रिटिश अधिकारियों को अपनी दलीलें दीं और उनकी दलीलें सुनीं जब हिंदू विधवाओं का पुनर्विवाह अधिनियम, 1856 या अधिनियम, 1856, 26 जुलाई, 1856 को लागू किया गया था।

ईश्वर चंद्र विद्यासागर एक विरोधाभासी व्यक्तित्व के थे। वह दूसरों की जिद या दलीलों से वह कभी प्रभावित नहीं हुए और अपने समझ और सोच के आधार पर फैसले लिए। उन्होंने उच्च ब्रिटिश अधिकारियों के खिलाफ खुद को रखा। 1856 में विधवा पुनर्विवाह अधिनियम को शुरू करने में उनकी सफलता के पीछे अस्थिर साहस था।

दूसरी ओर, उनके पास एक नरम दिल था जो दूसरे की दुर्दशा के लिए सहानुभूति रखते थे। वह औरों का दर्द देख क्र भावुक हूँ जाते थे और हमेशा दूसरों की मदद करने को तैयार रहते थे। वह अपना अधिकांश वेतन गरीब छात्रों के लिए खर्च करते थे। उसने अपने चारों ओर बच्चे और किशोर विधवाओं के दर्द को महसूस किया और उनकी समाज में स्थिति सुधारने के लिए अपना सब कुछ समर्पित कर दिया।

विद्यासागर भारतीय समाज में विधवाओं की स्थिति से दुखी थे। हमारे समाज में विधवाओं को अपना सिर मुंडवाने, सफेद साड़ी पहनने और अपने मृत पति के परिवार की सेवा करने के लिए अपना पूरा जीवन समर्पित करने के लिए मजबूर होना पड़ा। समाज में विधवा महिलाओं की संख्या पहले के समय में काफी अधिक थी क्योंकि वहाँ बुजुर्ग पुरुषों का किशोर लड़कियों से विवाह करने का चलन था।

कुछ विधवाएँ अपने घरों की चार दीवारी तक ही सीमित रहीं और एक विकट जीवन व्यतीत किया। दूसरों ने अपने घरों से भागकर मुक्त तोड़ने की कोशिश की। उनमें से अधिकांश ने जीविका कमाने के लिए वेश्याओं का रुख किया। जबकि उन्होंने अच्छी कमाई की, उन्हें समाज द्वारा नीचा देखा गया। दोनों तरह से, उनका जीवन दुखी था।

विद्यासागर विधवाओं के प्रति समाज की सामान्य मानसिकता को बदलने के लिए दृढ़ थे। उन्होंने सुधारों को लाने और विधवाओं को स्वतंत्रता और सम्मान प्रदान करने के लिए कड़ी मेहनत की। उन्होंने अपने अधिकारों के लिए लड़ाई लड़ी और वकालत की कि उनके साथ अच्छा व्यवहार किया जाना चाहिए। उन्होंने विधवा पुनर्विवाह की प्रथा का प्रस्ताव रखा। उन्होंने विधान परिषद में उसी के लिए एक याचिका दायर की लेकिन कड़ी आलोचना और विरोध का सामना करना पड़ा।

उनके प्रस्ताव को हिंदू परंपराओं और रीति–रिवाजों का उल्लंघन बताते हुए एक याचिका दायर की गई थी। हालाँकि, उन्हें इस मिशन में अक्षय कुमार दत्ता जैसे कई प्रमुख लोगों का भी समर्थन प्राप्त था। विद्यासागर ने विधवाओं के इलाज के बारे में विस्तार से लिखा है। उनके लेखन ने लोगों को समाज में विधवाओं की स्थिति में सुधार करने के लिए अपने मिशन में उनका समर्थन करने के लिए आकर्षित किया। हिंदू विधवाओं के पुनर्विवाह अधिनियम को अंततः 1856 में पारित किया गया।

बालिका शिक्षा के प्रवर्तक

विद्यासागर भारत में महिलाओं की स्थिति के उत्थान के लिए दृढ़ संकल्पित थे। उन्होंने बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए लगभग 35 स्कूलों की स्थापना की। उन्होंने लोगों को अपनी बालिका को शिक्षित करने की आवश्यकता के बारे में जागरूक किया। उन्होंने उनसे अपनी बेटियों को स्कूल भेजने का आग्रह किया ताकि वे आत्मनिर्भर हो सकें।

ईश्वर चंद्र के पास जो विशाल ज्ञान था और समाज में उनके योगदान ने उन्हें कई प्रशंसाएं दिलाईं। कई संस्थानों, सड़कों और यहां तक कि निष्पक्ष नाम भी उससे प्रेरित हैं। यहाँ इन पर एक नज़र है

- 1970 और 1998 के बीच, भारतीय डाक ने ईश्वर चंद्र विद्यासागर को स्टैम्प जारी किया।
- विद्यासागर सेतु, पश्चिम बंगाल में हुगली नदी पर बना एक प्रसिद्ध पुल ईश्वर चंद्र के नाम पर रखा गया है। यह पुल कोलकाता को हावड़ा से जोड़ता है।
- विद्यासागर विश्वविद्यालय की स्थापना प्रसिद्ध कैंब्रिज गणितज्ञ, अनिल कुमार गेन ने ईश्वर चंद्र के सम्मान के लिए की थी। विश्वविद्यालय पासिम मिदनापुर में स्थित है।
- कोलकाता में एक स्ट्रीट का नाम विद्वान के नाम पर रखा गया है। इसे विद्यासागर स्ट्रीट कहा जाता है।
- भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, खड़गपुर के हॉल ऑफ रेजिडेंस को विद्यासागर हॉल ऑफ रेजिडेंस नाम दिया गया है।

- ईश्वर चंद्र के नाम पर एक स्टेडियम का नाम भी उनके सम्मान के रूप में रखा गया है। बरसात में स्थित, इसे विद्यासागर स्टेडियम कहा जाता है।
- एक रेलवे स्टेशन को झारखंड के जामताड़ा जिले का नाम दिया गया है, विद्यासागर स्टेशन।
- पश्चिम बंगाल अपने दो शहरों कोलकाता और बिरसिंघा में हर साल एक मेला आयोजित करता है। इस मेले का उद्देश्य शिक्षा का प्रसार करना और सामाजिक जागरूकता बढ़ाना है। इस मेले का नाम विद्यासागर मेले के नाम पर रखा गया है, जो कि उच्च ज्ञान प्राप्त समाज सुधारक ईश्वर चंद्र विद्यासागर के नाम पर है।
- उनकी विद्वता और सांस्कृतिक कार्य को सम्मानित करने के लिए, विद्यासागर को वर्ष 1877 में सरकार द्वारा भारतीय साम्राज्य का एक साथी नामित किया गया था।

शोध का औचित्य

महिलाओं की स्थिति मध्यकाल और मुगलकाल से होते हुए ब्रिटिश और आधुनिक काल तक परिवर्तनशील रही है। इसमें वैदिक और उत्तर वैदिक काल में भी महिलाओं की स्थिति को सुधारने के लिए संघर्ष दिखाई देते है। महिलाओं की स्थिति कालांतर में निम्न होती गई और कई समाज सुधारकों ने महिलाओं की स्थिति को सुधारने का कार्य किया। इसमें विवेकानन्द, सावित्री बाई फुले, राजा राममोहन राय और ईश्वरचन्द्र विद्यासागर का का कार्य उल्लेखनीय है।

प्रस्तुत शोध का महत्व यह है कि ईश्वर चन्द्र विद्यासागर जिनकी दूरदृष्टि का परिणाम रहा महिला शिक्षा और विधवा विवाह से संबंधित कानून और उन्होनें सती प्रथा के उन्मूलन में भी कार्य किया। महिलाओं के विकास के लिए उनके विचार और उनके सिद्धांत आज के परिप्रेक्ष्य में भी उतने ही प्रखर है। आज भी महिलाओं की स्थिति सुधारने के लिए कई कानून बने है परंतु उनका अधिक प्रभाव नहीं देखा गया है। ऐसे में शोध के माध्यम से ईश्वर चन्द्र विद्यासागर के नारी उत्थान से संबंधित सिद्धांतों का विश्लेषण किया जाएगा जिनका आज के संदर्भ में उपयोग कर वर्तमान में नारी उत्थान को प्रबल करने की प्रेरणा व गति मिलेगी।

साहित्य समीक्षा

महिला उत्थान पर हुए शोध कार्य

बनर्जी, एस.एन. (1963) 'ए नेशन इन मेकिंग'

19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में ब्रिटेन में होनेवाले बौद्धिक हलचल ने आम ब्रितानियों को भारतीय समाज के गहन अध्ययन करने एवं उनकी अच्छाई – बुराई से अपने को जोड़ने के लिए बाध्य कर दिया। ब्रिटिश नेताओं ने पार्लियामेंट के अंदर एवं बाहर भारतीय समाज में सुधार लाने हेतु व्यापक चर्चाएँ की, संगोष्ठियों का आयोजन किया, पर्चे निकाले तथा अधीनस्थ क्षेत्रों के समाज को प्रोन्नत करने के तरीकों पर वाद–विवाद किया। एडवर्ड वर्क का दबाव प्रभावकारी सिद्व नहीं हो पा रहा था, क्योंकि भारतीय समाज की बहुरंगी तस्वीर उनके कार्य को कठिन से कठिनतर बनाए दे रही थी। फिर भी विलियम कैरी, मार्शमैन, विलियम वार्ड आदि हतोत्साहित नहीं हुए, वे सुधार के लिए कृतसंकल्पित थे। अनुदारवादियों में कार्नवालिस

से कैनिंग तक कोई भी प्रशासक ऐसा नहीं था जो भारतीय समाज के प्रति अच्छे विचार रखता हो। बेंथमवादी बेंटिक, मेटकॉफ और मैकाले भारतीय समाज में तेजी से सुधार लाना चाहते थे। उपयोगितावादी विचारधारावाले उदारवादी भारतीय समाज को उसके रुढ़िगत विचारों और प्रणालियों से उबारना चाहते थे। अनुदारवादी (टोरी दल) सुधार– प्रयासों के सर्वथा विरोधी थे, वे भारत में मिशनरियों के प्रचार कार्य को भी उचित नहीं मानते थे तथा भारत के रीति – रिवाजों और प्रथाओं में किसी प्रकार के परिवत्तर्न की चेष्टा को हानिकर समझते थे।

विलियम बेंटिक के शासन काल में हस्तक्षेप की नीति स्पष्ट रुप से अपनाई गई और उसके बाद अंग्रेज शासकों ने कभी स्वेच्छा से तो कभी भारतीयों की मांग पर समाज को प्रोन्नत करने की दिशा में काम करना प्रारम्भ किया। भारतीय समाज के गलत एवं अमानवीय रिवाजों एवं प्रथाओं के विरुद्व सरकारी आदेश निकाले जाने तथा अधिनियम बनाये जाने लगे। उपयोगितावादी मिल के पक्के अनुयायी विलियम बेंटिक इस उपयोगितावादी दर्शन को मानता था कि कानून परिवत्तर्न का एक कारगर साधन है और कानून के शासन की अवधारणा सुधार के लिए परम आवश्यक है। जब ऐसी ही माँग ऐज ऑफ कंसेंट बिल के दौरान महिलाओं ने की तो अंग्रेजी सरकार थोड़ी हिचक के साथ आगे बढ़ी तथा एक हाथ – पैर बँधे कानून को भारतीय जनता को सौंप दिया जिसकी वास्तव में उपयोगिता ही समाप्त हो गई थी; क्योंकि इस कानून में काफी बंदिशें लगा दी गई थी। साथ ही भारतीय परम्पराओं में उनकी आस्था बनी रही और उनकी यह इच्छा भी पलती रही कि भारतीयों को उनका सच्चा धर्म वापस दिलाया जाए, इसीलिए सती सम्बन्धी सुधार पर आधिकारिक संवाद इस तर्क पर आधारित रहा कि प्राचीन हिन्दू धर्म ही उनके उन्मूलन की आवश्यकता बताते है। 1857 के बाद भारत के

विक्टोरियाई उदारवाद ने पितावित्त ब्रिटिश राज की प्रमुख विचारधारा का रुप धारण कर लिया। 1857 की क्रांति ने बहुत लोगों को यह विश्वास दिला दिया था कि सुधार निरर्थक भी है।

हॉवेल, ए.पी. (1972) 'एज्यूकेशन इन ब्रिटिश इंडिया'

पुनर्जागरण काल में भारत में 'स्त्री की स्थिति' के सुधार के सारे प्रयत्न अपनी ईमानदार कोशिशों के बावजूद अमूल– चूल परिवत्तर्न के उद्देश्य से प्रेरित नहीं थे। जहाँ स्त्री की दयनीय दशा पर उदारतापूर्वक सोचा गया, सहानुभूतिपूर्वक समाधान खोजने की कोशिशें हुई; वहीं निर्णय के अधिकार पुरुषों के पास रहे। स्त्री अपने लिए कुछ नहीं करती स्त्री को जिस स्थिति में डाल दिया जाता है, उसे उसमें ही जीना है यदि पुरुष स्त्री के हित में सोचता है तो उसे उद्धारक का अहसान मानते हुए उसके व उसके परिवार के लिए होम होना स्त्री का लक्ष्य है, उसकी नियति है। सुधारवादी मौजूदा व्यवस्था में से ही हल निकालने के लिए प्रयत्नशील थे, इसलिए विधवा विवाह की संभावना बनने के बावजूद भी बालविवाह और सतीप्रथा का अंत नहीं हुआ। स्त्री की परिवार में हैसियत परिवित्तर्त नहीं हो सकी। वस्तुतः विश्व के अधिकांश भागों में स्थापित पूँजीवादी पितृसत्तत्मक व्यवस्था ने सामाजिक ढाँचा इस प्रकार निर्मित किया कि स्त्री व्यक्ति से वस्तु में बदल गई, जिसकी अपनी किसी भी वैयक्तिक सत्त से इंकार किया गया। ऐतिहासिक प्रक्रिया में स्त्री की शिक्षा, आर्थिक आत्मनिर्भरता, संस्कारों के प्रति सचेत दृष्टि के कारण उसकी स्वतंत्रता सीमित रही।

शुरुआती चरण की वास्तविकता यह थी कि महिला सशक्तिकरण के प्रयास को कठिन समस्याओं का सामना करना पड़ा। इसने पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन में अभूतपूर्व तनाव पैदा किया और समाज का मानस मथकर रख दिया। परम्पराओं के बँधन टूटने से जो भावनात्मक संकट समाज में उत्पन्न हुआ उसने पुरुषों और महिलाओं को कुछ समय के लिए अजीब से असमंजस में डाले रखा। इन सुधारों को लेकर तरह– तरह की प्रतिक्रियाएँ हुई। बंगाल में जब पहला विधवाविवाह हुआ तो उत्सुकतावश हजारों लोग इसे देखने जुटे। इसी तरह महाराष्ट्र में हुए पहले विधवाविवाह में जुटी भीड़ ने उग्र रुप धारण कर लिया तो पुलिस को आत्मरक्षार्थ लाठीचार्ज करना पड़ा। रुकमाबाई द्वारा अशिक्षित और बीमार पति के साथ रहने से इंकार करने पर पूरा कट्टरपंथी तबका विचालित हो उठा और धर्म की मर्यादा इस कदर हावी हुई कि रुकमाबाई को पैसे देकर अपनी जान छुड़ानी पड़ी। अपनी इच्छा क़े विपरीत रानाडे को एक युवा विधवा से शादी करने की स्थिति बनी तो उन्होंने अनेक रातें अंतर्द्वन्द्व में गुजारी। अंततः सामाजिक दबाव में आकर उन्होंने अपनी योजना का त्याग करते हुए वृद्वावस्था में एक युवा लड़की रमाबाई से शादी कर ली। लोकहितवादी, के0 टी0 तेलंग और कई दूसरे लोगों का भी यहीं हाल था जो अपने को दोराहे पर खड़ा पा रहे थे; एक तरफ परम्परायें थी तो दूसरी तरफ प्रतिबद्धता। यह अंतर्द्वन्द्व हरेक के मन में उथल – पुथल मचा रहा था। बहुत से लोग अंततः परम्पराओं की ओर वापस लौट गए। फिर भी इस संघर्ष में भारत में नया आदमी और नया समाज जरूर उभरा।

अल्टेकर, ए.एस. (1988) 'द पोजिशन ऑफ वूमैन इन इंडिया'

19वीं शताब्दी के अंतिम वर्षों तक सुधारवादियों की मानसिक एवं वैचारिक द्वैधता की स्थिति सामाजिक धरातल पर भी स्पष्ट नजर आने लगी थी। सतीप्रथा का जितना तेजी से प्रतिरोध हुआ, विधवाओं के पुनर्वास के सम्बन्ध में उस सक्रियता का सर्वथा अभाव रहा; क्योंकि यौन–पावित्र्य की भावना भारतीय मानस में शक्तिशाली थी। सती को लेकर राममोहन राय दोहरे द्वन्द्व से घिरे थे। उनके विरोधियों ने उनके खिलाफ मोर्चा खोल रखा था। 1828 ई0 में धर्मसभा के संस्थापक राजा राधाकांतदेव ने 'शब्दकल्पद्रूम' के सम्पादन के क्रम में सतीप्रथा का समर्थन किया था। राय का अंतर्द्वन्द्व उनकी पुस्तिका पढ़ने से स्पष्ट हो जाएगी; जहाँ पति के साथ सती होने पर प्राप्त होने वाले स्वर्गीय आनन्द को शास्त्रों द्वारा दी गई प्रतिश्रुति, तपपूर्ण वैधव्य से निम्नतर बताया गया है और इसे शाश्वत परमानन्द और ब्रह्म के साथ एकात्म करनेवाला बताया गया है; वहीं वेदान्तचन्द्रिका में स्त्रियों के साथ असमान व्यवहार का एक सार्वत्रिक सामाजिक तथ्य के रुप में जोशिला खण्डन करते हुए कहा गया है कि "मुझे दुख इस बात का है कि स्त्रियों को इस प्रकार पराश्रित और हर तरह से पीड़ित देखकर भी आप उनके लिए दया का अनुभव नहीं करते जो संभवतः उन्हें बाँधकर जला देने जैसी यातना से मुक्ति दिला सकती थी।" यही द्वैध दयानन्द के व्यक्तित्व में भी दिखाई देता है। जहाँ एक ओर वे स्त्री शिक्षा एवं स्त्रियों को यज्ञोपवीत दिए जाने का समर्थन करते है, वही दूसरी ओर बालविवाह के साथ ही विधवा पुनर्विवाह का भी विरोध करते नजर आते है।

केशवचन्द्र सेन जैसे बौद्धिक प्रगतिशील व्यक्ति का अपनी तेरह वर्षीया पुत्री का कूचविहार के राजकुमार से विवाह, नवोत्थानवादी राणाडे का ग्यारह वर्षीया बालिका से

वृद्वावस्था में विवाह, शारदा सदन का ईसाई मिशनरी में बदल जाना, ऐसी घटनायें थी, जिनका जनता पर विपरीत प्रभाव पड़ा और सामान्य जनता कोई स्पष्ट संकेत प्राप्त नहीं कर सकी। भारतीय संस्कृति की रक्षा के नाम पर दयानन्द सरस्वती ने विधवा पुनर्विवाह के विरोध के साथ ही नियोग प्रथा को उपयोगी बताया, तो तिलक ने बालविवाह के विरोध को भारतीय संस्कृति पर चोट माना। विवेकानन्द ने भी भारतीय अतीत की अधिभौतिक मातृछवि का महिमामंडन किया, बावजूद इसके कि वे पाश्चात्य स्त्री की स्वतंत्र चेतना से प्रभावित थे। समस्त क्षमताओं और संभावनाओं के बावजूद इसे पश्चिम का भारतीयकरण माना गया।

बिशप, डी.एच. (2010) 'थिंकर्स ऑफ इंडियन रिनेसेन्स'

19वीं शताब्दी के प्रारम्भिक कुछ वर्षा तक ब्रिटिश संसद ने सतीप्रथा के खिलाफ कानून बनाने से यह कहते हुए इंकार कर दिया था कि इसे हिन्दुओं के धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप माना जाएगा। अंग्रेजों की भारत में जागरण लाने की आत्मपरिभाषित भूमिका और समय की माँग के बीच तनाव के कारण सदी के आरम्भिक वर्षों में अंग्रेजों को कई विषयों पर समझौतावादी रुख अपनाने पर बाध्य होना पड़ा। उन्होंने सतीप्रथा पर जो नियम और कानून बनाए उसमें जबरन सती किए जाने और स्वेच्छा से सती होने में भिन्नता की गई थी। इस भेद ने सतीप्रथा के विरुद्व अभियान चलानेवालों को झकझोर कर रख दिया। एडवर्ड थाम्पसन के अनुसार अनेक आन्दोलनकारियों ने अंग्रेजों के इस कदम को सतीप्रथा को कानूनी जामा पहनाने की उनकी कोशिश के रुप में देखा।

सती पर प्रतिबन्ध के मुद्दे ने ब्रिटिश राजनीति में हलचल पैदा कर दी तथा इस मुद्दे पर अंग्रेज राजनीतिज्ञ एक–दूसरे के खिलाफ संघर्ष के निमित आ खड़े हुए थे। कंजरवेटिव दल के लोग जहाँ सती के मामले में हस्तक्षेप न करने का समर्थन कर रहे थे, वही लिबरल डेमोक्रेटिक पार्टी कानूनी कदम उठाने के लिए अभियान चला रही थी। स्वयं उदारवादी दो खेमों में विभाजित थे, इसमें एक खेमे का प्रतिनिधित्व गरमपंथी कर रहे थे तथा दूसरे का नेतृत्व उदार पादरियों के हाथ में था। पादरी समुदाय सतीप्रथा के अनुयायियों की छवि एक क्रूर एवं निर्दयी व्यक्ति के रुप में प्रस्तुत कर रहा था ताकि वह अपनी दलील की सच्चाई को साबित कर सके कि इस जधन्य कृत्य से बचने का उपाय सिर्फ और सिर्फ ईसाईयत में ही है। उनका मकसद अपने धर्म का प्रचार करना था जिसमें मिल के एंजिलवादी सदस्य सक्रिय थे। हिन्दू समाजसुधारकों का इस अभियान में शामिल होने से उदारवादियों को कुछ राहत मिली और उन्होंने इसे अपने पक्ष में हिन्दू समुदाय के एक वर्ग का अघोषित समर्थन माना जिसकी कमी उन्हें प्रारम्भ से ही महसूस हो रही थी।

दत्त, आर. (2018) 'इंडिया टूडे'

ऐतिहासिक अनुसंधान स्पष्ट करते है कि 19वीं सदी के सती निर्मूलन आन्दोलनों ने भ्रम की स्थिति पैदा कर दी थी। सती की घटनाएँ आम नहीं थी बल्कि इसका दायरा भी संकुचित था। सच्चाई यह है कि ये घटनाएँ कभी–कभार ही होती थी। अगर देखा जाय तो सती की घटनाएँ बड़े पैमाने पर 19वीं शताब्दी के आरम्भिक दशकां में बंगाल में हुई जहाँ लगभग हर रोज एक स्त्री सती होती थी। सुधार आन्दोलन के दौरान सती की घटनाओं से सम्बन्धित आँकड़े एकत्र किए गए तथा हैरानी जताई गई कि यह हाल उस राज्य का है जहाँ सतीप्रथा

उन्मूलन के समर्थक विलियम बेंटिक का शासन था। उदाहरण के तौर पर आन्दोलनकारी यह उल्लेख कर पाने में विफल रहे कि इनमें कितने मामले सती के थे और कितने विधवाओं द्वारा किए गये आत्महत्या के। यह संभव है कि सती के प्रति घृणाभाव होने और सती की घटनाओं की गंभीरता को प्रमाणित करने के लिए सरकारी आकड़ों में हेर–फेर की गई हो तथा विधवा स्त्रियों द्वारा की गई आत्महत्याओं को भी सती के रुप में पेश किया गया हो। आनन्द यांग के अनुसार 19वीं सदी के पूर्वार्द्ध के बंगाल में जो आँकड़े एकत्र किए गये है उनमें एक निश्चित अनुपात में उन औरतों की संख्या बहुत थी; जिन्होंने अपने पति की मृत्यु के वर्षां बाद आत्महत्या कर ली थी। असहाय जिन्दगी के अकेलेपन से भयभीत होकर उन्होंने आत्महत्या का रास्ता अपनाया होगा, ऐसा नहीं था कि उनके अंदर 'सत' का प्रवेश हो गया था।

ईश्वर चन्द्र विद्यासागर पर हुए शोध कार्य

गुहा, ए. (1971) 'अनपब्लिशड लेटर्स ऑफ विद्यासागर'

अपने शोध में विद्यासागर के कई पत्रों के अध्ययन से यह स्पष्ट किया कि ईश्वर चन्द्र विद्यासागर बहुत दूरदर्शी समाज सुधारक थे। यदि उनके विचार और सिद्धांत समाज में अपनाए जाते तो ना केवल महिला उत्थान वरन् बुजुर्ग वर्ग, दलित वर्ग और शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय परिष्करण हो सकते है।

मिश्रा, एस.सी. (2002) 'ईश्वर चन्द्र विद्यासागर'

अपने कार्य में यह स्पष्ट किया विद्यासागर महिला उत्थान के प्रथम समाज सुधारक थे जो उनके उत्थान के लिए एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण तो रखते ही थे इसके साथ वह समाज

की रूढिवादिता को शिक्षा के माध्यम से दूर करते थे। उनकी शिक्षा नीतियों में एक आदर्श समाज के गुण समाहित थे।

भट्टाचार्य, एस. (2010) 'विद्यासागर : एक समाज सुधारक'

अपने कार्य में इन्होनें बताया कि भारत में कई प्रभावी समाज सुधारक हुए उनमें विद्यासागर अद्वितीय प्रतिभा सम्पन्न थे। वह महिला उत्थान के किसी भी प्रयास को सबसे पहले स्वयं के घर परिवार पर ही लागू करते थे। वह किसी अन्य पर दबाव डालने के बजाए स्वयं ही उदाहरण प्रस्तुत करते थे। ऐसे में विद्यासागर का महिला उत्थान हेतु किए गए कानूनी प्रयास भी ऐसे रहे जो वर्तमान में भी प्रासंगिक है।

समस्या कथन

ईश्वर चन्द्र विद्यासागर का महिला शिक्षा एवं महिला सुधार प्रयासों की वर्तमान में प्रासंगिकताः एक अध्ययन

शोध के उद्देश्य

1. ईश्वर चन्द्र विद्यासागर के समाज के विभिन्न पक्षों पर विचारों और सिद्धांतों का वर्तमान संदर्भ में महत्व ज्ञात करना।

2. तत्कालीन महिला शिक्षा हेतु ईश्वर चन्द्र विद्यासागर के योगदान का अध्ययन करना।

3. ईश्वर चन्द्र विद्यासागर के अतिरिक्त अन्य समाज सुधारकों के कार्यों की तुलना करना।

4. ईश्वर चन्द्र विद्यासागर के द्वारा किए गए महिला सुधार कार्यों के प्रभावों का वर्तमान संदर्भ में अध्ययन करना।

5. वर्तमान में महिलाओं की स्थिति को जानना और उसके कारणों व समाधानों को ईश्वर चन्द्र विद्यासागर के विचारों और सिद्धांतों से विश्लेषण करना।

परिकल्पनाऐं

1. ईश्वर चन्द्र विद्यासागर द्वारा महिला शिक्षा के प्रयासों और वर्तमान में उनकी प्रासंगिकता के मध्य कोई सार्थक सहसंबंध नहीं है।

2. ईश्वर चन्द्र विद्यासागर द्वारा महिला सुधार के प्रयासों और वर्तमान में उनकी प्रासंगिकता के मध्य कोई सार्थक सहसंबंध नहीं है।

शोध में प्रयुक्त परिभाषीकरण

महिला सुधार – महिलाओं की स्थिति को उच्च करना और समाज में उनकी समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करना महिला सुधार कहलाता है।

महिला शिक्षा – महिलाओं हेतु उपलब्ध शिक्षा प्रणाली को महिला शिक्षा कहा जाता है।

प्रासंगिकता – किसी विचार और सिद्धांत की वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जांच करते हुए उसका महत्व स्पष्ट करना प्रासंगिकता कहलाता है।

शोध के आयाम

शोध में महिला शिक्षा और महिला सुधार हेतु किए गए प्रयासों को निम्न आयामों द्वारा जांचा जाएगा –

1. महिला शिक्षा हेतु सामाजिक जागरूकता
2. महिला शिक्षा हेतु नए शिक्षण संस्थानों का संचालन
3. महिला शिक्षा हेतु राजनीतिक और कानूनी जागरूकता
4. महिला सुधार हेतु कानून पारित करवाने संबंधी प्रयास
5. महिलाओं के लिए सती प्रथा, विधवा विवाह और शिक्षा हेतु किए गए आंदोलन

शोध के चर

स्वतंत्र चर – ईश्वर चन्द्र विद्यासागर के सिद्धांत और प्रासंगिकता

आश्रित चर – महिला शिक्षा और महिला सुधार के प्रयास

शोध क्षेत्र

शोध क्षेत्र में ईश्वर चन्द्र विद्यासागर के कार्यों, महिला उत्थान पर उनके विचारों, प्रयासों ओर सिद्धांतों का संकलन उनके पत्रों, पुस्तकों और शोध कार्यों से किया जाएगा।

तार्किक विश्लेषण

शोधार्थी द्वारा शोध में विषय वस्तु का तार्किक विश्लेषण करते हुए ईश्वर चन्द्र विद्यासागर की प्रासंगिकता को स्पष्ट किया जाएगा।

शोध प्रक्रिया

प्रथम चरण – शोध संबंधी साहित्य का संकलन किया जाएगा।

द्वितीय चरण – लेख, पुस्तकों, जीवनी आदि जो अन्य विद्वानों द्वारा लिखी गई है उसका विषय वस्तु के साथ विश्लेषण करते हुए क्रमबद्ध संकलन किया जाएगा।

तृतीय चरण – महिला उत्थान संबंधी तथ्यों को खोजकर उनका विश्लेषण किया जाएगा।

चतुर्थ चरण – उद्देश्यानुसार तथ्यों का विश्लेषण किया जाएगा।

पंचम चरण – प्राप्त निष्कर्षों में पूर्वानुमान की जांच की जाएगी।

परिसीमाऐं

प्रस्तुत शोध ईश्वर चन्द्र विद्यासागर के महिला उत्थान संबंधी कार्यों की वर्तमान प्रासंगिकता तक सीमित होगा।

अध्याय विन्यास

1. शोध का प्रस्तुतीकरण एवं संबंधित साहित्य का अध्ययन
2. ईश्वर चन्द्र विद्यासागर : महिला उत्थान हेतु कार्य
3. ईश्वर चन्द्र विद्यासागर के कार्यों की अन्य समाज सुधारकों से तुलना
4. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में महिलाओं की स्थिति
5. वर्तमान संदर्भ में ईश्वर चन्द्र विद्यासागर के सिद्धांतों का विश्लेषण
6. उपसंहार

संदर्भ ग्रंथ

1. कार्टर, गुड एवं एस. बार स्केट्स, मैथडोलॉजी ऑफ एजुकेशन,एप्लटन क्राफ्ट्स, 1954, पृ. 104
2. सरीन एवं सरीन, ”शैक्षिक अनुसंधान विधियॉ, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 2008, पृ. 57
3. राय, पारसनाथ, अनुसंधान परिचय, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल प्रका ान, आगरा, 1993 पृ. 95
4. सरीन एवं सरीन, ”शैक्षिक अनुसंधान विधियॉ, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 2008, पृ. 57
5. शर्मा, शम्भूलाल, (2011) ‘‘तुलसीदास का शैक्षिक दर्शन’’ (रामचरितमानस के आधार पर) दिल्ली विश्वविद्यालय।
6. मीणा, राजेश कुमार, (2011) ‘‘मैथिली शरण गुप्त के साहित्य में निहित राष्ट्रीय शैक्षिक मूल्यों का अध्ययन।’’ दिल्ली विश्वविद्यालय।
7. सैनी, अनिता, (2011) ‘‘आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के संवेगात्मक निबन्धों का शैक्षिक निहितार्थ’’, कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय।
8. माया, (2011) ‘मुंशी प्रेमचंद के प्रमुख उपन्यासों में शैक्षिक मूल्यों का अध्ययन।’ इलाहबाद विश्वविद्यालय।
9. शर्मा, ज्योति, (2011) ‘‘रामधारी सिंह दिनकर के काव्यों निहित शैक्षिक निहितार्थ का अध्ययन।’’ इलाहबाद विश्वविद्यालय।

10. अग्निहोत्री, आर. (2011) 'कबीर के चिन्तन में मानव मूल्य'', पीएच.डी शिक्षा, बरकतुल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल।

11. अग्रवाल, कुसुम, (2011) 'रामतीर्थ का शिक्षा दर्शन' पीएच.डी. शिक्षा आगरा विश्वविद्यालय।

12. नन्द, विजय, (2011) 'डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के शैक्षिक विचारों की आधुनिक भारत में प्रासंगिकता' पीएच.डी. शिक्षा आगरा विश्वविधालय।

13. दुबे, ऊषा शर्मा, (2011) 'रामचरितमानस में अन्तर्निहित शैक्षिक विचारधारा एवं मूल्य', पीएच.डी शिक्षा, वनस्थली विद्यापीठ, निवाई–टोंक।

14. साध्वी, ललित रेखा, (2011) 'जैन दर्शन में जैन शिक्षा दर्शन स्वप्न मनोविश्लेषण', पीएच.डी., जैनोलॉजी, जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय, लाडनूं।

15. पचौरी, आशुतोष, (2012) 'भारतीय जीवन मूल्य आधारित शिक्षा व्यवस्था के सन्दर्भ में आचार्य श्रीराम शर्मा के शैक्षिक विचारों की प्रासंगिकता' पीएच.डी. शिक्षा डॉ. बी.आर. अम्बेडकर विश्वविद्यालय आगरा।

16. जैन, बी.एल. (2012) 'प्रमुख स्मृतियों के शिक्षा दर्शन का अध्ययन' पीएच.डी. शिक्षा राज. विश्वविद्यालय।

17. शर्मा, शीतल, (2012) ''पंचतंत्र कथाओं की वर्तमान में शैक्षिक उपादेयता'', दिल्ली विश्वविद्यालय।

18. भारोटे, ए.सी., (2012) 'विनोबा भावे के दर्शन का अध्ययन और नई शिक्षा नीति पर उसका प्रभाव' पीएच.डी. शिक्षा नागपुर विश्वविद्यालय।

19. पटेल, एम.यू., (2012) 'मनुभाई पंचौली के दर्शन मनुभाई पंचौली दर्शन का शिक्षा दर्शन के आलोचनात्मक अध्ययन' पीएच.डी. शिक्षा गुजरात विश्वविद्यालय।

20. शर्मा, आदर्श, (2012) 'भागवत गीता में प्रकृति और व्यक्तित्व का विकास वर्तमान समाज में इसकी प्रासंगिकता' पीएच.डी. शिक्षा कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय।

21. रामशरण, (2013), 'लोकमान्य तिलक के शैक्षिक विचार एवं व्यवहार' पीएच.डी. शिक्षा कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय।

22. जैन, पूनम (2013) ''श्री चन्द्रप्रभ के शैक्षिक विचारों में अध्ययन'', राजस्थान विश्वविद्यालय।

23. पालीवाल, श्रुति (2013) ''पंडित श्री राम शर्मा आचार्य के शैक्षिक विचारों का अध्ययन'', शिक्षा विभाग, गुरूकुल कांगरी विश्वविद्यालय, हरिद्वार।

24. राय, एस.एस., (2013) 'गांधीजी की बुनियादी शिक्षा संकल्पना सिद्धान्त और प्रयोग' पीएच.डी. शिक्षा बोम्बे विश्वविद्यालय।

25. भागवन्ती, (2013) 'डॉ. राधाकृष्णन के शिक्षा दर्शन की सामाजिक परिवर्तन में प्रासंगिकता' पीएच.डी. शिक्षा आगरा विश्वविद्यालय।

26. गुप्ता, आर.पी. (2013) 'स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक विचारों का अध्ययन' पीएच.डी. शिक्षा, जेएनयू, दिल्ली।

27. भट्टाचार्य, आर., (2013) 'रवीन्द्र शिक्षा दर्शन (बंगाली में)' कोलकाता विश्वविद्यालय।

28. पालीवाल, नरेश कुमार, (2013) ''प्रेमचन्द की उत्कृष्ट कहानियों में निहित शैक्षिक मूल्यों का अध्ययन'' इलाहबाद विश्वविद्यालय।

29. शर्मा, सत्यनारायण, (2013) ''मैथिली शरण गुप्त शिक्षाशास्त्र की अप्रतीम धरोहर।'', गुजरात विश्वविद्यालय।

30. शर्मा, रिचा, (2013) ''कबीर के साहित्य में नैतिक शिक्षा के स्वरूप का अध्ययन'', जेएनयू, दिल्ली।

31. शर्मा, विवेक, (2014) ''जयशंकर प्रसाद के उपन्यासों में शैक्षिक निहितार्थ का अध्ययन।'' दिल्ली विश्वविद्यालय।

32. शर्मा, अशोक कुमार, (2014) 'उपनिषदों के शैक्षिक विचारों की प्रासंगिकता' पीएच.डी. शिक्षा पंतजलि विश्वविद्यालय।

33. वशिष्ठ, नीलम (2014), ''श्री पार्थ सारथी राजगोपालाचारी के शैक्षिक विचारों का अध्ययन'', दिल्ली विश्वविद्यालय।

34. शर्मा, शोभना (2014), ''रवीन्द्रनाथ टैगोर के शैक्षिक विचारों की वर्तमान समय में प्रासंगिकता : एक अध्ययन'', इलाहबाद विश्वविद्यालय।

35. शर्मा, निधि, (2014) 'मध्यकालीन कवियों द्वारा प्रतिपादित शैक्षिक मूल्यों का आधुनिक परिप्रेक्ष्य में अध्ययन कबीर एवं तुलसी के विशेष संदर्भ में पी.एच.डी. शिक्षा, चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय।

36. गुप्ता, किरण (2015), ''पंडित मदन मोहन मालवीय के शैक्षिक विचार एवं उनकी वर्तमान समय में प्रासंगिकता : एक अध्ययन'', जयपुर नेशनल यूनिवर्सिटी, जयपुर।

37. कुमार अनूप, (2015) 'रवीन्द्रनाथ टैगोर के शैक्षिक चिंतन की आधुनिकता', पीएच.डी. शिक्षा राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर।

38. गर्ग कुमार दखेश, (2015) 'श्रीमद्भगवदगीता के दार्शनिक, शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक विचारों का विवेचनात्मक अध्ययन', पीएच.डी., श्री अग्रसेन स्नातकोतर शिक्षा महाविद्यालय सी.टी.ई. केशव विद्यापीठ, जामडोली, जयपुर।

39. सिंह, पूनम, (2015) 'मूल्य विकास के परिप्रेक्ष्य में महात्मा मूल्य परिप्रेक्ष्य गांधी एवं स्वामी विवेकेकानन्द के शैक्षिक विचारों के क्रियान्वयन का अध्ययन', पीएच.डी. शिक्षा, इलाहाबाद विश्वविद्यालय

40. शर्मा, मनु, (2015) 'श्रीमद् भागवत में निहित शैक्षिक निहितार्थ का वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अध्ययन', पीएच.डी. शिक्षा राजस्थान विश्वविद्यालय

41. भगवती, गौतम प्रसाद (2016) ''गाँधी चिंतन में शिक्षा और महिला सशक्तीकरण'', जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली।

42. अग्रवाल, सावित्री, (2017) 'प्रसाद की कृतियों में शैक्षिक चिंतन का अध्ययन।' दिल्ली विश्वविद्यालय।

43. सैनी, सत्येन्द्र कुमार, (2017) ''कालीदास के नाटकों में शैक्षिक निहितार्थ'', दिल्ली विश्वविद्यालय।

44. महेता, सत्यप्रकाश (2011), "स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक विचार",नया शिक्षक, अप्रेल–जून 2011, कमीश्नर सैकण्डरी एजुकेशन, राज. बीकानेर, पृ.सं. 18–19 ।

45. व्यास, जगदीश चन्द्र (2011), "श्री मां : व्यक्तित्व एवं शिक्षा दर्शन", शिविरा पत्रिका,फरवरी 2011, पृ.सं. 31।

46. चित्तौडा, शशि एवं श्रीमाली, ललित कुमार (2011), “कबीर की साखियों में गुरु–शिष्य सम्बन्ध”, लोकमान्य शिक्षक, वर्ष 2011, अंक 37, पृ. 45 ।

47. मिश्रा, रीता एवं इमाम, रजी (2011), “वर्तमान परिप्रेक्ष्य में महर्षि दयानन्द के शैक्षणिक विचारों की उपयोगिता”, नव आर्थिक(आर्थिक –सामाजिक विषयों की पत्रिका), वर्ष 21, वोल्यू न.1, वसंत अंक–ए, पृ. सं. 42

48. मिश्रा, एम. के., दाधीच, कमल (2011), “गांधी दर्शन” अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, पृ. सं. 26–27

49. कौशिक, कमल (2012), “दीनदयाल उपाध्याय का दर्शन एवं उसके शैक्षिक निहितार्थ”, भारतीय शिक्षा शोध पत्रिका, वर्ष31, अंक–2,, जुलाई–दिसम्बर 2012, पृ. सं.11 ।

50. चौधरी चेनाराम (2014) नया शिक्षक शोध पत्रिका, कालिदास के साहित्य में शिक्षा व समाज, पृ. 30

51. शर्मा सुनील– (2013–14) नई शिक्षा शोध पत्रिका, संत कबीर की वैचारिकता एवं परसाई, पृ. 36

52. जैन, शारदा (2016), शिक्षा के लक्ष्य, पृ. 42

53. व्यास, श्याम मनोहर (2016) ‘‘टैगोर का शिक्षा दर्शन एवं रचना संसार’’, पृ. 56